ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 1, Issue 2, December 2012

गांधी और अंबेडकरः समसामयिक परिस्थिति में कौन अधिक प्रासंगिक

डॉ. गणपत राम सुथार

सह-आचार्य, राजनीति विज्ञान, एसबीके राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जैसलमेर

सारः संविधान ने अस्पृश्यता और छुआछूत को गैर-कानूनी और दंड योग्य अपराध माना है लेकिन संविधान के प्रावधान कागज पर ही धरे रह गए हैं। देश के विभिन्न भागों से लगातार दलित उत्पीड़न की खबरें आती रहती हैं। पिछले चार साल से इन घटनाओं में अभूतपूर्व ढंग से वृद्धि हुई है। दलितों और आदिवासियों के पक्ष में आवाज उठाने वालों को अब अक्सर नक्सली और माओवादी बताकर जेलों में सड़ने के लिए डाल दिया जाता है। एक ओर सत्ताधारी हिंदुत्ववादी महात्मा गांधी के हत्यारे नाथूराम गोडसे का महिमामंडन करते हैं और उनके जमीनी स्तर के कार्यकर्ता गांधी के खिलाफ लगातार जहर उगलते हैं, तो दूसरी ओर उनके राष्ट्रीय स्तर के नेता उन्हें अपने भीतर समाहित करने और उनका सम्मान करने का ढोंग करते रहते हैं। इस 2 अक्टूबर से अगले वर्ष के 2 अक्टूबर तक महात्मा गांधी की डेढ़सौवीं जयंती मनाने के लिए एक-वर्षीय कार्यक्रम शुरू हो जाएगा। सरकारी स्तर पर भी बहुत-से कार्यक्रम आयोजित किए जाएंगे। लेकिन क्या कभी किसी ने सोचा कि राष्ट्रपिता के विचारों, जीवन-मूल्यों और आदर्शों की किस तरह से लगातार अनदेखी की गई है और की जा रही है? दलितों के प्रति व्यापक समाज, प्रशासन, पुलिस और राजनीतिक वर्ग का रवैया कैसा है? क्यों डिजिटल युग में प्रवेश करने को लेकर इठलाने वाले देश की सरकारें आज तक केवल दलितों को ही सफाई कर्मचारियों के रूप में नियुक्त करती हैं और क्यों उनके इस काम के लिए विकसित देशों में इस्तेमाल होने वाले तकनीकी उपकरणों का सहारा नहीं लिया जाता? ऊपर से देखने पर लगता है कि यह आंबेडकर का युग है, गांधी का नहीं क्योंकि अधिकांश दलित आंदोलनकारी गांधी के विरोधी और आंबेडकर के अनुयायी हैं। लेकिन इसी के साथ यह प्रश्न भी उठता है कि यदि गांधीवादी विचारधारा दलितों का वास्तविक उत्थान नहीं कर पाई तो क्या आंबेडकरवादी विचारधारा के आधार पर हुए आंदोलन इस काम में सफलता प्राप्त कर पाए हैं? क्या अब समय नहीं आ गया कि गांधी और आंबेडकर के विचारों के बीच साम्य और संतुलन बिठाने की कोशिश की जाए, भले ही दोनों महापुरुष अपने जीवनकाल में अधिकांशतः असहमत ही रहे हों? जब हिंदुत्ववादी संघ इन दोनों के विचारों के साथ समरसता पैदा करना चाहता है, भले ही दिखावे के लिए ही सही तो फिर गांधीवादी और आंबेडकरवादी एक-दूसरे को समझने और साथ-साथ चलने के लिए राजी क्यों नहीं हो सकते?

गांधी और भीमराव आंबेडकर के आदर्शों में कोई अंतर था? क्या दोनों ही दलितों के उत्थान, जाति पर आधारित भेदभाव की समाप्ति और मनुष्य की समानता के लक्ष्यों के प्रति ईमानदारी के साथ समर्पित नहीं थे? ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के खिलाफ चले स्वाधीनता आंदोलन के विशिष्ट संदर्भ में उनके बीच उभरे मतभेद क्या आज के बदले हुए संदर्भ में भी उतने ही प्रासंगिक और महत्वपूर्ण हैं जितने वे आज से आठ-नौ दशक पहले थे? संभवतः नहीं।

परिचय

1920 और 1930 के दशक में गांधी ने अस्पृश्यता के खिलाफ बेहद भावपूर्ण और सशक्त लेख लिखे और उसे हिंदू समाज पर लगा कलंक बताया। यही नहीं, उन्होंने आंबेडकर के बारे में एक बार यहां तक लिख दिया, “उन्हें, बल्कि सभी अछूतों को, मुझ पर थूकने का पूरा हक है। और यदि उन्होंने ऐसा किया, तो भी मैं मुस्कुराता हुआ खड़ा रहूंगा।” ‘हरिजनोत्थान करने वाले हम कौन हैं?’ शीर्षक लेख में उन्होंने लिखा, “हम उनके ऋण से तभी उऋण हो सकते हैं और उनके खिलाफ किए गए पापों का तभी प्रायश्चित कर सकते हैं जब हम उनके खिलाफ लंबे-चौड़े उत्तेजक भाषण झाड़ने के बजाय उन्हें समाज के बराबरी के सदस्य के रूप में अंगीकार करें।” उन्होंने यह भी लिखा कि “हिंदू समाज के खिलाफ आंबेडकर के गुस्से को वह भली-भांति समझते हैं क्योंकि दक्षिण अफ्रीका में उनके शुरुआती दिनों के दौरान यूरोपियन लोग भी हर समय उन्हें खदेड़े रहते थे।”[1]

दरअसल, गांधी और आंबेडकर की विश्वदृष्टि और सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया की समझ में बुनियादी अंतर था। भले ही इसे अव्यावहारिक आदर्शवाद माना जाए, लेकिन गांधी का समूचा जोर मनुष्य को बदलने पर था क्योंकि उन्हें पता था कि मनुष्य में जब तक भीतरी बदलाव नहीं होगा तब तक सामाजिक बदलाव भी संभव नहीं है। दूसरी ओर आंबेडकर बहुत कुछ संविधानवादियों की परंपरा में थे और सबसे पहले कानून और शासनतंत्र में परिवर्तन चाहते थे ताकि अछूतों और दलितों को उनके जायज अधिकार प्राप्त हो सकें और उनके लिए समाज में सम्मान के साथ जीने की स्थितियां पैदा हों। दोनों के लक्ष्यों में बहुत अधिक अंतर नहीं था लेकिन उन्हें पाने के तरीकों के बारे में बुनियादी मतभेद थे। आंबेडकर चाहते थे कि दलित अपने अधिकार स्वयं लड़कर प्राप्त करें, किसी की कृपा के कारण उन्हें उनके अधिकार और समाज में समानता का दर्जा न मिले। क्योंकि स्वयं अपने अधिकार प्राप्त करने पर ही दलितों में आत्मसम्मान और आत्मविश्वास आ सकता है।[2]

शासक वर्ग की विचारधारा अक्सर शासित वर्ग को भी अपनी गिरफ्त में ले लेती है। सवर्ण तो दलितों को हीन मानते ही थे, उनके प्रभाव में दलित भी अपने को हीन ही समझने लगे थे और आंबेडकर के सामने सबसे बड़ी चुनौती उनके भीतर आत्मसम्मान और आत्मविश्वास जगाने की थी। फिर, उन्होंने स्वयं दलित होने के दंश को झेला था और कदम-कदम पर अपमान, उपेक्षा और सक्रिय विरोध का सामना किया था। इसलिए दलित समस्या पर उनके और गांधी के विचारों में भिन्नता स्वाभाविक थी। लेकिन दोनों के बीच जिस तरह का विरोध पनपा, उसके लिए ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन और उसके खिलाफ चल रहे स्वाधीनता संघर्ष की पृष्ठभूमि ही मुख्यतः जिम्मेदार थी। जहां गांधी का प्रथम लक्ष्य अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति पाना और भारत को एक स्वाधीन राष्ट्र बनाना था, वहीं आंबेडकर का प्रथम लक्ष्य दलितों को सवर्ण हिंदुओं की गुलामी से मुक्ति दिलाना और अपने पैरों पर खड़ा करना था। दोनों के बीच पहली बार कटुता लंदन में हुए गोलमेज सम्मेलन के समय प्रकट हुई। गांधी भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के शीर्ष नेता थे लेकिन इस सम्मेलन में आमंत्रित 56 प्रतिनिधियों के बीच उनकी हैसियत और आवाज केवल एक प्रतिनिधि की थी। आंबेडकर ब्रिटिश सरकार द्वारा नामजद प्रतिनिधि थे। इस सम्मेलन में उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि वे जिन दलित वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं, उन्हें ब्रिटिश शासन की समाप्ति की कोई जल्दी नहीं है और न उन्होंने ब्रिटिश सरकार से भारतीयों को सत्ता हस्तांतरित किए जाने के लिए कोई आंदोलन ही छेड़ा है। यही नहीं, उन्हें यह मानने में भी आपत्ति थी कि गांधी राष्ट्रीय आंदोलन के सर्वमान्य नेता के रूप में सभी भारतीयों का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। जिन्ना की तरह ही आंबेडकर भी गांधी को केवल हिंदू, बल्कि सवर्ण हिंदू नेता ही मानते थे। जिन्ना की तरह ही वह भी गांधी को हमेशा मिस्टर गांधी कहते रहे।[3]

आज 2009 में जब देश गांधी की डेढ़सौवीं जयंती मना रहे हैं, तब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि दलित समस्या पर आज गांधी का दृष्टिकोण अधिक प्रासंगिक है या आंबेडकर का? मेरा निजी विचार यह है कि इन दोनों परस्पर विरोधी दृष्टिकोणों को आज मिलाकर चलने की जरूरत है। गांधी की यह मान्यता कि मनुष्य के भीतर बदलाव लाए बिना समाज में बदलाव नहीं लाया जा सकता, आज सही सिद्ध हो रही है। संविधान में प्रदत्त अधिकारों के बावजूद आज भी देश में दलितों की हालत बेहद खराब है, क्योंकि सवर्णों का उनके प्रति हिकारत का रवैया नहीं बदला है और आज भी दलित दूल्हे के घोड़ी पर चढ़कर बारात निकालने पर गांव में हिंसा हो जाती है। यह भी सच है कि दलितों को कानून का संरक्षण दिया जाना अनिवार्य है, वरना उन पर अत्याचार करने वालों को मनमानी करने से रोकने के लिए कानून का सहारा भी नहीं रहेगा। दलितों के खिलाफ उत्पीड़न संबंधी कानून के प्रावधानों को नर्म बनाने पर छिड़ी बहस इसका ताजातरीन उदाहरण है। आंबेडकरवाद और गांधीवाद आज एक-दूसरे के पूरक अधिक हैं, विरोधी कम।[4]

विचार-विमर्श

आंबेडकर का महात्मा गांधी के प्रति नज़रिया तब और अब, दोनों वक़्तों में बहस का विषय रहा है. इंटरनेट की वजह से आज हम उस इंटरव्यू को सुन पा रहे हैं.डॉक्टर आंबेडकर की रिकॉर्डिंग बहुत कम है, ऐसे में बीबीसी का इंटरव्यू एक महत्वपूर्ण आर्काइव है. इस इंटरव्यू में डॉक्टर आंबेडकर ने गांधी के बारे में कई तीखी बातें कही हैं. गांधी को ख़ारिज करने वालों के लिए ये इंटरव्यू एक संगीत की तरह है, जो उनके कानों को अच्छा लगेगा. हालांकि ये उन लोगों को चकित नहीं करेगा जो गांधी-आंबेडकर के रिश्तों के बारे में जानते हैं. इतिहासकार रामचंद्र गुहा ने अपनी नई किताब 'गांधीः द इयर्स दैट चेंज्ड द वर्ल्ड' ने इस इंटरव्यू का यह कहते हुए जिक्र किया है कि "1930 और 1940 के दशक में लिखे उनकी विवादित रचनाओं में भी उन्होंने (डॉक्टर आंबेडकर) गांधी की निंदा की है."63 साल पहले की गई उनकी आलोचनाओं में उन्होंने अपनी राय, ऐतिहासिक दावों और विश्लेषण को शामिल किया था. आंबेडकर के मुताबिक, "गांधी भारत के इतिहास में एक प्रकरण थे, वो कभी एक युग-निर्माता नहीं थे. गांधी पहले से ही इस देश के लोगों के ज़ेहन से ग़ायब हो चुके हैं. उनकी याद इसी कारण आती है कि कांग्रेस पार्टी उनके जन्मदिन या उनके जीवन से जुड़े किसी अन्य दिन सालाना छुट्टी देती है. हर साल सप्ताह में सात दिनों तक एक उत्सव मनाया जाता है. स्वाभाविक रूप से लोगों की स्मृति को पुनर्जीवित किया जाता है."

गांधी एक युग निर्माता थे या नहीं, यह एक खुला सवाल है और इसका सही जवाब पाना और उसे सभी के लिए स्वीकार करना मुश्किल है.[5]

यह तब और मुश्किल है जब गांधी को इस दुनिया से गए हुए महज सात दशक हुए हैं. और जहां तक बात रही छुट्टियों के जरिए उन्हें लोगों की स्मृति में बनाए रखने का तो यह कल की बात है. गांधी आज भी जिंदा हैं और हम उन्हें आने वाले समय में भी याद रखेंगे.(हम गांधी को एक ऐतिहासिक शख़्सियत की बात कर रहे हैं न कि उनके विचारों की)आंबेडकर ने कहा कि वो गांधी से हमेशा एक प्रतिद्वंद्वी की हैसियत से मिलते थे. इसलिए वो गांधी को अन्य लोगों की तुलना में बेहतर जानते थे.आंबेडकर ने इंटरव्यू मे कहा था, "आमतौर पर भक्तों के रूप में उनके पास जाने पर कुछ नहीं दिखता, सिवाय बाहरी आवरण के, जो उन्होंने महात्मा के रूप में ओढ़ रखा था. लेकिन मैंने उन्हें एक इंसान की हैसियत से देखा, उनके अंदर के नंगे आदमी को देखा, लिहाज़ा मैं कह सकता हूं कि जो लोग उनसे जुड़े थे, मैं उनके मुक़ाबले गांधी को बेहतर समझता हूं."आंबेडकर के नज़रिए से ये दावे शायद सही हों, पर उनके बयान से यह स्पष्ट है कि उन्होंने गांधी को केवल एक दृष्टिकोण और एक तरह के नज़रिए से ही देखा था और इसी की बदौलत उन्होंने गांधी के बारे में अपनी राय बनाई थी.राजनीतिक ज़रूरतों के लिए उन्होंने गांधी के लिए शालीनता और कोमलता

का भी प्रदर्शन कई बार किया. जैसे, 6 सितंबर 1954 को डॉक्टर आंबेडकर ने नमक पर टैक्स लगाने की सलाह दी और इसका नाम 'गांधी निधि' रखने का सुझाव दिया. वो चाहते थे कि इसमें जमा राशि का खर्च दलितों के उत्थान के लिए किया जाए.[6]

उन्होंने कहा था, "मेरे मन में गांधीजी के प्रति आदर है. आप जानते हैं कि चाहे कुछ भी हो जाए, गांधीजी को पिछड़ी जाति के लोग अपनी जान से भी ज़्यादा प्यारे थे. इसलिए वह स्वर्ग में से भी आशीर्वाद देंगे."

आंबेडकर ने इंटरव्यू में गांधी पर आरोप लगाया है, "गांधी हर समय दोहरी भूमिका निभाते थे. उन्होंने युवा भारत के सामने दो अख़बार निकाले. पहला 'हरिजन' अंग्रेज़ी में, और गुजरात में उन्होंने एक और अख़बार निकाला जिसे आप 'दीनबंधु' या इसी प्रकार का कुछ कहते हैं. अंग्रेज़ी समाचार पत्र में उन्होंने ख़ुद को जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता का विरोधी और ख़ुद को लोकतांत्रिक बताया. लेकिन अगर आप गुजराती पत्रिका को पढ़ते हैं तो आप उन्हें अधिक रूढ़िवादी व्यक्ति के रूप में देखेंगे. वो जाति व्यवस्था, वर्णाश्रम धर्म या सभी रूढ़िवादी सिद्धांतों के समर्थक थे. दरअसल किसी को गांधी के 'हरिजन' में दिए गए बयान और गुजराती अख़बार में दिए उनके बयानों का तुलनात्मक अध्ययन करके उनकी जीवनी लिखनी चाहिए."इस इंटरव्यू के बाद के सालों में बहुत कुछ हुआ. गांधी के सभी लेख मूल रूप में आज उपलब्ध हैं. इनके अनुवाद भी किए गए हैं, जो 100 खंडों में हमारे बीच मौजूद हैं.किसी के लिए आज गांधी के गुजराती लेखों को अंग्रेज़ी में प्राप्त करना आसान है. गांधी की विरासत को समेटे वेबसाइट पोर्टल [7](gandhiheritageportal.com) पर भी हरिजन (अंग्रेजी), 'हरिजन सेवक' (हिंदी) और 'हरिजन बंधु' (गुजरात) के लगभग सभी अंक उपलब्ध हैं.कोई भी आसानी से उनके गुजराती और अंग्रेज़ी के लेखों की तुलना कर सकता है और अपनी ग़लतफहमी को दूर कर सकता है.इन लेखों के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि गांधी ने अपने अंग्रेज़ी लेखों में जाति-व्यवस्था का जोरदार समर्थन किया और गुजराती लेखों में सख्त शब्दों में छूआछूत का विरोध किया है. डॉक्टर आंबेडकर ने छूआछूत के उन्मूलन के साथ समान अवसर और गरिमा पर जोर दिया था और दावा किया कि गांधी इसके विरोधी थे.उनके मुताबिक गांधी छूआछूत की बात सिर्फ़ इसलिए करते थे ताकि अस्पृश्यों को कांग्रेस के साथ जोड़ सकें. वो चाहते थे कि अस्पृश्य स्वराज की उनकी अवधारणा का विरोध न करें. गांधी एक कट्टरपंथी सुधारक नहीं थे और उन्होंने ज्योतिराव फूले या फिर डॉक्टर आंबेडकर के तरीके से जाति व्यवस्था को खत्म करने का प्रयास नहीं किया.[8]

फिर भी, कांग्रेस या राष्ट्रीय राजनीति में उतरने से पहले गांधी ने 1915 में अपने आश्रम में एक दलित परिवार को रहने दिया. उनके इस फ़ैसले का काफी विरोध हुआ और आश्रम बंद होने की संभावना बढ़ने लगी थी, लेकिन वो अपने फैसले से पलटे नहीं.ऐसे कई उदाहरण हैं. और अगर बात की जाए दलित अधिकारियों की तो उन्होंने अपने कैबिनेट में जगजीवन राम और खुद डॉक्टर आंबेडकर को जगह दी थी.
डॉक्टर आंबेडकर ने सही कहा था कि अंग्रेजों ने भारत को आज़ादी देने पर सहमति गांधी के आंदोलनों की वजह से नहीं बल्कि अन्य दूसरे कारणों से दी थी.गांधी और आंबेडकर के बीच दलितों के लिए अलग मतदाता सूची और पूना पैक्ट विवाद का मुद्दा था. आंबेडकर का दावा भी सही था. मुंबई इलाक़े में डॉक्टर आंबेडकर की पार्टी के समर्थित 17 में से 15 उम्मीदवारों ने आरक्षित सीट पर जीत हासिल की थी. बाकी अन्य 151 आरक्षित सीटों पर कांग्रेस ने आधी से ज्यादा सीटों पर जीत हासिल की थी.डॉक्टर आंबेडकर ने जो कुछ भी इंटरव्यू में कहा है, उसके आधार पर वर्तमान समय में गांधी को खारिज नहीं किया जा सकता है और यह सही भी नहीं है.[9]

परिणाम

डॉ. आंबेडकर और महात्मा गांधी दो भिन्न-भिन्न विचारधाराओं के प्रतिनिधि हैं। वैश्विक संदर्भ में आंबेडकर पाश्चात्य दर्शन (तर्क) के पक्ष में खड़े हैं तो गांधी गैर पाश्चात्य दर्शन (आस्था) के पक्ष में खड़े हैं। भारतीय संदर्भ में डा. आंबेडकर बौद्ध दर्शन का प्रतिनिधित्व करते हैं तो गांधी वैदिक दर्शन का। महात्मा गांधी और डॉ. आंबेडकर बीसवीं सदी की प्रभुत्वशाली व महान विभूतियों में गिने जाते हैं। दोनों की उम्र में एक पीढ़ी का अंतर था। गांधी 2 अक्टूबर, 1869 को पैदा हुए थे और आंबेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को हुआ था। गांधी के ज्येष्ठ पुत्र हीरालाल गांधी का जन्म 23 अगस्त, 1888 में हुआ था। इस प्रकार आंबेडकर, गांधी से उम्र में 22 वर्ष छोटे थे और उनके ज्येष्ठ पुत्र हीरालाल से 3 वर्ष छोटे थे। लेकिन भारत की राजनीति में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप दोनों विभूतियों ने एक ही समय किया। जनवरी, 1915 में गांधी दक्षिण अफ्रीका से बच्चों की पढ़ाई और अपनी वकालत बंबई में शुरू करने के लिए भारत लौटे। फरवरी, 1916 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी के समारोह में सार्वजनिक तौर पर भारत के राष्ट्रवादियों एवं रजवाड़ों के समक्ष गांधी ने अपना विचार व्यक्त किया। इस भाषण में गांधी ने भारत की राजनीति में सक्रिय होने के स्पष्ट संकेत दिए। वहीं डॉ. आंबेडकर ने 9 मई, 1916 को अमेरिका के कोलंबिया विश्वविद्यालय में मानव विज्ञान के सेमिनार में एक शोधपत्र पढ़ा। किसी भी सार्वजनिक मंच पर डॉ. आंबेडकर द्वारा दिया गया यह पहला भाषण था। इस भाषण की विषय-वस्तु और आंबेडकर के तेवर से स्पष्ट था कि वे भारतीय राजनीति में सक्रिय हस्तक्षेप की उद्घोषणा कर रहे हैं। दोनों महापुरुषों के भाषण से श्रोता आश्चर्यचकित थे। गांधी ने अपने भाषण में स्वराज के लिए चल रहे आंदोलन की कड़ी आलोचनात्मक समीक्षा प्रस्तुत की तो आंबेडकर ने भारत में जाति की कड़वी एवं वीभत्स सच्चाई से विश्व के महानतम बुद्धिजीवियों को अवगत कराया। इसके बाद का इतिहास गांधी और आंबेडकर विचारों के बीच संघर्ष का इतिहास है। भारत के नवनिर्माण की दृष्टि से दोनों भिन्न-भिन्न विश्व दृष्टियों के प्रतिनिधि हैं। दोनों विश्वदृष्टियां एक दूसरे की विरोधी

ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 1, Issue 2, December 2012

हैं। गांधी की दृष्टि में भारत के नवनिर्माण का अर्थ था भारत में वैदिक संस्कृति के मूल्यों की स्थापना और डॉ. आंबेडकर पाश्चात्य आधुनिक मूल्यों के आधार पर भारत का नवनिर्माण करना चाहते थे और इन मूल्यों को बौद्ध सभ्यता के मूल्यों से जोड़ते थे। भारतीय राजनीति आज भी इन्हीं दोनों दृष्टिकोणों के बीच संघर्ष की राजनीति है। दोनों महापुरुषों की मंजिलें अलग हैं, इसलिए रास्ते भी अलग हैं और साधन भी अलग हैं।[10]

गांधी ने अपने जीवन में तीन पुस्तकें लिखीं। 1908 में 'हिंद स्वराज', 1929 में 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग या मेरी आत्मकथा' और तीसरी 1948 में 'की आफ हेल्थ'। 'हिंद स्वराज' गांधी की राजनैतिक विचारों की पुस्तक है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने भाषणों एवं पत्र-पत्रिकाओं में समय-समय पर अपने विचारों को व्यक्त किया। हालांकि गांधी ने मात्र तीन पुस्तकें लिखी, लेकिन उनके ऊपर आज की तारीख तक हजारों पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं और अभी भी लिखी जा रही हैं। एक हजार से अधिक जीवनियां तो मात्र अंग्रेजी भाषा में लिखी गई हैं। हिंदी, गुजराती, मराठी, फ्रेंच जैसी तमाम देशी और विदेशी भाषाओं में भी अनगिनत जीवनियां लिखी गई हैं। गांधी के भाषण, लेखों और पत्रों के संकलन का 100 खंड प्रकाशित किया जा चुका है। गांधी के जीवन और विचार प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रमों से लेकर उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों में प्रमुखता से शामिल किए गए हैं। इसके विपरीत डॉ. आंबेडकर ने अर्थशास्त्र, राजनीति, समाज, धर्म आदि विविध विषयों पर लगभग 20 पुस्तकें लिखीं और प्रकाशित कराया। लेकिन डॉ. आंबेडकर पर सभी भाषाओं में लिखी पुस्तकों की संख्या अभी सैकड़ों में ही होगी। उनकी जीवनियों की संख्या भी शायद ही दहाई पार कर पाए। आंबेडकर के लेखन, भाषण और पत्रों के संग्रह के नाम पर उनके द्वारा लिखित और प्रकाशित पुस्तकों का ही संग्रह प्रकाशित है जो अंग्रेजी में 17 खंडों में है। इसी का अनुवाद हिंदी सहित अन्य भाषाओं में भी प्रकाशित है। पत्र-पत्रिकाओं में लिखे लेखों, भाषणों, पत्रों एवं साक्षात्कारों आदि का प्रकाशन अभी भी नहीं हुआ है। प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर के पाठ्यक्रमों से आंबेडकर एवं उनका साहित्य बाहर है। [11]

दरअसल, गांधी को महामानव के रूप में भारतीय शासक जातियों द्वारा स्थापित करना एवं आंबेडकर को तिरस्कृत करना कोई सामान्य घटना नहीं है। इसे भारत की शासक जातियों के वास्तविक चरित्र का पता चलता है। कुछ वर्षों पहले एक निजी समाचार चैनल ने 'गांधी के बाद महान भारतीय' की खोज के लिए एक सर्वेक्षण कराया जिसमें डॉ. आंबेडकर को गांधी के बाद महान भारतीय का खिताब दिया गया। प्रश्न यह उठता है कि गांधी को इस सर्वेक्षण से बाहर रखकर चैनल ने स्वयं उनको महान घोषित कर दिया। चैनल को यह डर था कि गांधी को सर्वेक्षण में शामिल किया गया तो कहीं आंबेडकर गांधी से भी ज्यादा अंक न प्राप्त कर लें। चैनल का डर वास्तविक था। आज आंबेडकर, गांधी से आगे निकल गए हैं। इस समय जितने भी आंदोलन लोकतांत्रिक मूल्यों को बचाने के लिए चल रहे हैं, उन सभी में डॉ. आंबेडकर की तस्वीर प्रमुखता से दिखाई देती है। वे आज लोकतांत्रिक मूल्यों के लिए संघर्ष के प्रतीक बन गए हैं। विश्वविख्यात गांधीवादी इतिहासकार रामचंद्र गुहा भी डॉ. आंबेडकर की तस्वीर के साथ प्रदर्शन करते हैं, जिन्होंने गांधी को स्थापित करने के लिए अपना पूरा जीवन लगा दिया, बड़े-बड़े भारी-भरकम ग्रन्थों की रचना कर डाली, लेकिन डॉ. आंबेडकर के ऊपर दस पृष्ठ भी नहीं लिखा। यही भारत के बुद्धिजीवी वर्ग का वास्तविक चरित्र है। सवर्ण जातियों के बुद्धिजीवियों ने जितना परिश्रम गांधी को देश और विदेश में स्थापित करने हेतु किया, उसका दस प्रतिशत परिश्रम भी डॉ. आंबेडकर को स्थापित करने के लिए किया होता तो रामचंद्र गुहा जैसे इतिहासकारों को आज डॉ. आंबेडकर का चित्र लेकर सड़क पर प्रदर्शन नहीं करना पड़ता। जिन लोकतांत्रिक अधिकारों और संस्थाओं को बचाने हेतु रामचंद्र गुहा जैसे हजारों सवर्ण बुद्धिजीवी संघर्ष कर रहे हैं उनके पक्ष में गांधी कभी भी नहीं थे। गांधी उन्हें पश्चिमी संस्था मानते थे तथा लोकतंत्र, स्वतंत्रता, समानता, न्याय व बंधुत्व को पश्चिमी सभ्यता का मूल्य मानते थे। इसीलिए इन मूल्यों और इन मूल्यों को पुष्पित, पल्लवित व संरक्षित करने हेतु निर्मित संस्थाओं को बचाने के लिए डॉ. आंबेडकर की आवश्यकता पड़ रही है। [12]

गांधी के विपरीत डॉ. आंबेडकर पाश्चात्य दार्शनिक मूल्यों के आधार पर भारत का नवनिर्माण करना चाहते थे। पाश्चात्य दर्शन का अर्थ भौगोलिक नहीं है। पाश्चात्य दर्शन का अर्थ है तर्क आधारित दर्शन जबकि गैर पाश्चात्य दर्शन को आस्था आधारित दर्शन कहा जाता है। भारत में दर्शन की दोनों परंपराएं रही हैं। चार्वाक और बौद्ध दर्शन तर्क पर आधारित है जबकि वैदिक दर्शन आस्था पर आधारित है। गांधी सहित सभी सवर्ण लेखक, बुद्धिजीवी दर्शन की वैदिक परंपरा को ही भारतीय परंपरा घोषित कर चुके हैं, जबकि यह सत्य नहीं है। आर्यों के विदेशी आगमन के सिद्धांत को यदि माने तो चार्वाक और बौद्ध दर्शन ही भारतीय दर्शन है और वैदिक दर्शन गैर भारतीय दर्शन घोषित हो जाएगा। हम मूल विषय पर आते हैं। डॉ. आंबेडकर आधुनिक मूल्यों जिसके केंद्र में ईश्वर के स्थान पर मनुष्य है, आस्था के स्थान पर तर्क है, धर्म के स्थान पर विज्ञान है, और लोक-कल्याण है,[26] के आधार पर भारत का नवनिर्माण करना चाहते थे। इसलिए गांधी के विपरीत डॉ. आंबेडकर अपनी बात तार्किक ढंग और स्पष्ट तरीके से कहते हैं। गांधी वर्ण-व्यवस्था के आधार पर हिंदू समाज का नवनिर्माण करना चाहते थे। जबकि डॉ. आंबेडकर के विचार से वर्ण व्यवस्था के आधार पर समाज का नवनिर्माण नहीं हो सकता है। उन्होंने अपनी पुस्तक 'जाति का विनाश' में अपने विचारों को रखा है। आंबेडकर का मत है कि जाति ने हिंदुओं को बर्बाद कर दिया है। चातुर्वर्ण के आधार पर हिंदू समाज का पुनर्गठन असंभव है, क्योंकि वर्ण व्यवस्था एक ऐसे बर्तन की तरह है, जिसमें छेद है या ऐसे आदमी की तरह नाक बह रही है। यह सिर्फ अपने गुण के आधार पर अपने को बनाए नहीं रख सकती और इसके जाति व्यवस्था के रूप में पतित होने की अंतर्जात क्षमता है, जब तक इसके साथ कानूनी शक्ति न जोड़ी जाए, जिसे वर्ण का नियम तोड़ने वाले हर आदमी पर लागू किया जा सकता हो। वर्ण-व्यवस्था के आधार पर हिंदू समाज का पुनर्गठन नुकसानदेह है, क्योंकि वर्ण व्यवस्था का परिणाम होता है, जनसाधारण को शिक्षा के अवसरों से वंचित कर उसका निम्नीकरण करना और शस्त्र धारण करने के अधिकार से वंचित कर उसे कायर बनाना। हिंदू समाज का पुनर्गठन ऐसे धार्मिक आधार पर होना चाहिए, जिसमें

स्वतंत्रता, समानता और भातृत्व के सिद्धांतों की स्वीकृति हो। इस उद्देश्य को पाने के लिए जाति और वर्ण को जो धार्मिक मान्यता मिली हुई है, उसे नष्ट करना होगा।' वर्ण व्यवस्था के मूल में असमानता है और यह असमानता धर्मशास्त्रों एवं ईश्वर द्वारा समर्थित है। [13]

विश्व की सभी सामाजिक विकास के विभिन्न चरणों में असमानताओं ने जन्म लिया लेकिन किसी भी सभ्यता में किसी भी तरह की असमानता को धर्म और ईश्वर का समर्थन नहीं मिला। वैदिक धर्म ही ऐसा धर्म है जिसके धर्मशास्त्र जाति के आधार पर असमानता का समर्थन देते हैं। काले-गोरे के भेद को बाइबिल और ईश्वर का समर्थन नहीं हासिल है। इसलिए डॉ. आंबेडकर वर्ण व्यवस्था को ध्वस्त करने के लिए हिंदू धर्मशास्त्रों को भी डाइनामाइट लगाकर उड़ाने की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं। 1927 में उन्होंने स्वयं मनुस्मृति जलाई थी। डॉ. आंबेडकर अपने आदर्श समाज के विषय में कहते हैं कि 'मेरा आदर्श एक ऐसा समाज होगा,[25] जो स्वतंत्रता, समता और भ्रातृत्व पर आधारित हो।' इसकी विस्तृत व्याख्या भी वे करते हैं। यहां यह ध्यान देना भी उचित होगा कि डॉ. आंबेडकर जब भी बात करते हैं तो वे भारतीय समाज के पुनर्गठन की बात करते हैं, जिसमें हिंदू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, अस्पृश्य एवं आदिवासी सभी सामाजिक तबके शामिल हैं। गांधी जब भी बात करते हैं तो केवल हिंदू समाज के पुनर्गठन की बात करते हैं।भारतीय अर्थव्यवस्था के पुनर्गठन के संबंध में भी डॉ. आंबेडकर का विचार स्पष्ट हैं। वे अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन राजकीय समाजवाद के सिद्धांतों पर करना चाहते हैं, जिसमें औद्योगीकरण एक मुख्य तत्व है। वे खेती के भी औद्योगीकरण का प्रस्ताव रखते हैं, बैंक, बीमा, सहित सभी मूलभूत उद्योगों एवं सभी बड़े उद्योगों को डॉ. आंबेडकर सरकारी नियंत्रण में रखने का प्रस्ताव रखते हैं। अपनी पुस्तक 'राज्य और अल्पसंख्यक' में डा. आंबेडकर ने भारतीय अर्थव्यवस्था के पुनर्गठन संबंधी विचारों के व्यक्त किया है जिसके मुख्य बिंदू निम्नवत् है-[14]

1. वे उद्योग, जो प्रमुख उद्योग हैं अथवा जिन्हें प्रमुख उद्योग घोषित किया जाए, राज्य के स्वामित्व में रहेंगे और राज्य द्वारा चलाए जाएंगे।
2. वे उद्योग, जो प्रमुख उद्योग नहीं है, किंतु बुनियादी उद्योग हैं, राज्य के स्वामित्वाधीन रहेंगे और राज्य द्वारा या राज्य द्वारा स्थापित निगमों द्वारा चलाए जाएंगे।
3. बीमा राज्य के एकाधिकार में रहेगा और राज्य हर वयस्क नागरिक को विवश करेगा कि वह अपनी आय के अनुरुप ऐसी जीवन बीमा पालिसी ले, जो विधानमंडल द्वारा विहित की जाए।
4. कृषि राज्य का उद्योग होगा।[15]

सामाजिक विचारों की तरह डा. आंबेडकर के आर्थिक विचार भी स्पष्ट एवं पारदर्शी हैं। वे भारत की राजनीतिक प्रणाली लोकतंत्र के सिद्धांतों के आधार पर चलाना चाहते थे। लोकतंत्र को परिभाषित करते हुए उन्होंने कहा कि 'लोकतंत्र, सरकार का रूप और शासन पद्धति है, जिसके द्वारा लोगों के आर्थिक और सामाजिक जीवन में बिना रक्तपात के क्रांतिकारी परिवर्तन किए जाते हैं।' आगे वे कहते हैं कि लोकतंत्र, सरकार का एक स्वरूप मात्र नहीं है। यह वस्तुतः साहचर्य की स्थिति में रहने का एक तरीका है, जिसमें सार्वजनिक अनुभव का समवेत रूप से संप्रेषण होता है। लोकतंत्र का मूल है, अपने साथियों के प्रति आदर और सम्मान की भावना। डॉ. आंबेडकर का मत है कि लोकतंत्र चार स्तंभों पर निर्भर हैं-[24]

1. व्यक्ति अपने आप में एक सिद्धि है।
2. व्यक्ति के कुछ अहरणीय अधिकार होते हैं, जिनकी गारंटी उसे संविधान द्वारा दी जाए।
3. कोई विशेषाधिकार प्राप्त करने की पूर्व शर्त के रूप में किसी व्यक्ति से यह अपेक्षा न की जाए कि वह अपने संवैधानिक अधिकारों में से किसी अधिकार का परित्याग करे।
4. राज्य दूसरों पर शासन करने के लिए गैर सरकारी लोगों को शक्तियां प्रत्यारोपित न करे। [16]

डा. आंबेडकर पाश्चात्य दर्शन की लोकतंत्र की अवधारणा के आधार पर भारत की राजनीतिक सत्ता का पुनर्गठन चाहते हैं। जिसमें स्वतंत्रता, समानता, न्याय, बंधुत्व व व्यक्ति की गरिमा जैसे मूल्यों को मान्यता दी गई है। वे शासन की शक्तियों को व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका में विभाजित करना चाहते हैं। जबकि गांधी रामराज्य के रूप में एकात्मक शासन स्थापित करने का प्रस्ताव करते हैं जो पूर्णतः जन विरोधी अवधारणा प्रमाणित हो चुकी है। इस प्रकार डॉ. आंबेडकर और महात्मा गांधी दो भिन्न-भिन्न विचारधाराओं के प्रतिनिधि हैं। वैश्विक संदर्भ में आंबेडकर पाश्चात्य दर्शन (तर्क) के पक्ष में खड़े हैं तो गांधी गैर पाश्चात्य दर्शन (आस्था) के पक्ष में खड़े हैं। भारतीय संदर्भ में डा. आंबेडकर बौद्ध दर्शन का प्रतिनिधित्व करते हैं तो गांधी वैदिक दर्शन का। भारत के सवर्ण बुद्धिजीवी गांधी और आंबेडकर के विषय में भ्रामक प्रचार करते हैं कि दोनों की मंजिल एक है लेकिन रास्ते अलग-अलग। वास्तव में दोनों की मंजिलें भी अलग-अलग हैं और रास्ते भी अलग हैं। डा. आंबेडकर आधुनिकता के वाहक हैं तो गांधी वैदिक धर्म का पुनरुत्थान चाहते हैं। दोनों के विचारों का संघर्ष ही आज की राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक संघर्षों के मूल में है। इस विचार को सवर्ण बुद्धिजीवी जितना जल्दी स्वीकार कर लेंगे, भारत का भला उतनी ही जल्दी होगा[17]

ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 1, Issue 2, December 2012

निष्कर्ष

अपनी पुस्तक 'हिंद स्वराज' में गांधी अंग्रेजों से स्पष्ट कहते हैं कि "हम मानते हैं कि आपके कायम किए हुए स्कूल और अदालतें हमारे काम की नहीं हैं। हम चाहते हैं कि उनके बदले हमारी पुरानी पाठशालाएं और पंचायती अदालतें फिर स्थापित हो जाए।" गांधी के दर्शन को भारतीय बुद्धिजीवियों ने 'गांधीवाद के रूप में' देश और विदेश में प्रचारित किया। गांधीवाद को एक नया दर्शन कहा गया। जबकि वास्तविकता यह है कि गांधी वैदिक संस्कृति के मूल्यों को ही नवीन शब्दों में प्रस्तुत कर रहे थे। इन मूल्यों को गांधी भारतीय सभ्यता का मूल्य कह रहे थे जबकि ये सभी मूल्य वैदिक संस्कृति के मूल्य थे। भारतीय इतिहास में दो सभ्यताओं का प्रमाण मिलता है। एक है सिंधुघाटी सभ्यता तथा दूसरी है बौद्ध सभ्यता। रामराज्य जैसी अवधारणा इन दोनों सभ्यताओं में नहीं है। रामराज्य वैदिक संस्कृति की अवधारणा है। गांधी के अनुसार 'रामराज्य' ईश्वर का राज्य है। 'ईश्वर का राज्य' बौद्ध सभ्यता की अवधारणा नहीं है। यह वैदिक संस्कृति की अवधारणा है। अहिंसा और सत्याग्रह, अपने विचारों को जनता और सरकार के समक्ष प्रस्तुत करने की विधि है। इसे स्वतंत्र दार्शनिक मूल्य के रूप में गांधी के मौलिक दर्शन के रूप में प्रचारित किया गया। वास्तव में अहिंसा और सत्याग्रह लोकतांत्रिक आंदोलन की विधि है जो गांधी के समय के बहुत पहले से ही प्रयोग में लाई जा रही थी। भारत में जोतीराव फुले इसी विधि को अपनाते थे। लोकतांत्रिक आंदोलन को अहिंसा और सत्याग्रह कहने के पीछे गांधी की क्या मंशा थी। वे चाहते तो अपने आंदोलन को लोकतांत्रिक आंदोलन भी कह सकते थे। कारण स्पष्ट है।[18]

गांधी बहुत ही प्रतिभाशाली एवं महत्वाकांक्षी व्यक्ति थे। उनकी घोर आस्था वैदिक संस्कृति के मूल्यों में थी। लेकिन जिस समय गांधी वैदिक संस्कृति के मूल्यों को भारत में स्थापित करना चाहते थे उस समय इन मूल्यों को पुनस्र्थापित करने की परिस्थितियां नहीं थी। अंग्रेज शासन कर रहे थे, जिनकी सभ्यता वैदिक मूल्यों के विरोध में थी। ईसाई धर्म में शुद्धता-अशुद्धता का मूल्य नहीं है। इसलिए वे गाय और सूअर दोनों खाते थे। मुसलमानों द्वारा गाय का मांस खाना वैदिक संस्कृति के सामने बहुत बड़ी चुनौती थी, अछूतों और आदिवासियों में भी वैदिक मूल्यों के प्रति कोई आसक्ति नहीं थी। इसलिए गांधी ने वैदिक मूल्यों को अपना मौलिक दर्शन कहकर प्रस्तुत किया। गांधी स्वयं कहते हैं कि रामराज्य का अर्थ हिंदू राज नहीं है, ईश्वर का राज्य है। तो गांधी रामराज्य क्यों कहते हैं सीधे ईश्वर का राज्य क्यों नहीं कहते हैं। इसी प्रकार स्वराज्य का उस समय सामान्य और प्रचलित अर्थ का ब्रिटिश राजसत्ता से भारत की आजादी। लेकिन गांधी कहते हैं कि स्वराज्य का अर्थ है- अपने मन पर राज्य करना। यह एक नैतिक अवधारणा है। गांधी सत्य की खोज करते हैं और कहते हैं कि ईश्वर ही सत्य है। तो फिर गांधी यह क्यों नहीं कहते कि मैं ईश्वर की खोज कर रहा हूं। गांधी ने अपने मौलिक दर्शन के नाम पर जिन शब्दों को गढ़ा, उन सभी के प्रचलित अर्थ के विपरीत एक नया अर्थ दिया। यह दार्शनिक का कार्य नहीं है यह राजनीतिज्ञ का कार्य है। इसलिए गांधी दार्शनिक नहीं हैं। गांधी मूलतः वैदिक संस्कृति की रक्षा करना चाहते थे चूंकि परिस्थितियां विपरीत थी इसलिए अपने विचारों को अस्पष्टता के साथ प्रस्तुत करते थे। जिससे समय अनुकूल होने पर रामराज्य को हिंदू राज, अहिंसा को हिंसा, सत्याग्रह को दुराग्रह, स्वराज्य को 'अंग्रेजों को भारत से निकालने' जैसे शब्दयुग्मों से आसानी से प्रतिस्थापित किया जा सके। वैदिक धर्म और संस्कृति के रक्षक के रूप में गांधी का चेहरा उस समय सामने आता है जब वे वर्ण-व्यवस्था और जाति-व्यवस्था के पक्ष में खड़े हो जाते हैं। वे कहते हैं कि 'जाति प्रथा एक सामाजिक विधान है। भारत में उसे धार्मिक जामा पहना दिया गया है। अन्य देशों में जहां जाति व्यवस्था की उपयोगिता नहीं समझी गयी, वहां यह ढीले-ढाले रूप में मौजूद रही और इसी वजह से वे लोग इस व्यवस्था से उतना लाभान्वित नहीं हो सके जितना भारत हुआ।' जाति प्रथा से भारत में कौन लाभान्वित हुआ? जवाब यही कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जातियों के लोग जाति प्रथा से लाभान्वित हुए। आज भी भारत के संसाधनों पर इन्हीं का कब्जा है। आज भारत में जितने भी अरबपति हैं, सभी बनिया या वैश्य हैं। [19]

न्यायपालिका, प्रशासकीय सेवा और विश्वविद्यालयों में ब्राह्मणों, कायस्थों और क्षत्रियों का कब्जा है। 85 प्रतिशत जनसंख्या जाति प्रथा के कारण ही नारकीय व पशुवत जीवन जीने को मजबूर है। आज भी 90 प्रतिशत दलित भूमिहीन हैं। 80 करोड़ लोग 20 रुपए प्रतिदिन से कम पर गुजारा करते हैं। क्या यह 85 प्रतिशत दलित-बहुजन जनता गांधी के 'भारत' का हिस्सा नहीं है, जिसे जाति प्रथा से कोई लाभ नहीं हुआ है। दुर्भाग्य से यही सच्चाई है। जिस तरह से गांधी वैदिक संस्कृति को भारत की सभ्यता मानते हैं उसी प्रकार ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य अर्थात् द्विज वर्णों को ही भारत के संसाधनों के उपयोग और उपभोग का अधिकारी मानते हैं। शूद्र, महिलाएं एवं दलित तीनों उच्च वर्णों की सेवा के लिए हैं। लेकिन गांधी की सच्चाई को सवर्ण बुद्धिजीवियों द्वारा उजागर नहीं होने दिया गया।[23]

गांधी अपने जीवन के उत्तरार्ध में जाति प्रथा पर थोड़ा नरम रूख अपनाते हैं, लेकिन वर्ण व्यवस्था का समर्थन जीवनपर्यंत करते रहते हैं। गांधी कहते हैं कि 'मैं विश्वास करता हूं कि वर्णों का विभाजन जन्म पर आधारित है। वर्ण-व्यवस्था में ऐसी कोई बात नहीं है, जो शूद्रों को विद्याध्ययन अथवा आक्रमण या प्रत्याक्रमण करने वाली सैनिक युद्ध कला सीखने से वंचित करती हो। इसके विपरीत भी, क्षत्रिय के लिए सेवा अथवा नौकरी करने का विकल्प भी खुला है। वर्ण-व्यवस्था द्वारा उस पर भी कोई रोक नहीं है। वर्ण-व्यवस्था इस बात की रोक लगाती है कि शूद्र विद्याध्ययन को अपनी आजीविका नहीं बनाएगा, न ही क्षत्रिय सेवा कार्य को अपनी आजीविका बनाएगा। इसी प्रकार ब्राह्मण युद्ध कला या वाणिज्य सीख सकता है, परंतु उसे अपनी आजीविका नहीं बनाएगा। वैश्य भी विद्या प्राप्त कर सकता है अथवा युद्ध कला सीख सकता है, परंतु उसे अपनी आजीविका नहीं बना सकता। वर्ण व्यवस्था जीविकोपार्जन से संबद्ध है। इसमें कोई हानि नहीं, यदि किसी एक वर्ण का व्यक्ति दूसरे वर्ण की विशेषता वाला ज्ञान या विज्ञान और कला अर्जित कर लेता है। परंतु जहां तक आजीविका का संबंध है, उसके लिए उसे अपने ही वर्ण का पेशा, यानी अपने पूर्वजों का वंशानुगत पेशा ही अपनाना होगा। वर्ण का अर्थ है, मनुष्य के जन्म लेने से पहले ही उसके पेशे का निर्धारण। वर्ण व्यवस्था में किसी मनुष्य को अपनी पसंद का

पेशा चुनने की स्वतंत्रता नहीं होती। उसका पेशा उसकी वंश परंपरा से ही निर्धारित रहता है।' ऐसे विचारों के प्रणेता गांधी को सवर्ण विद्वान आधुनिक भारत का महानतम भारतीय घोषित कर चुके हैं। वर्ण व्यवस्था, वैदिक धर्म की रीढ़ है। रीढ़ को बचाकर गांधी वैदिक धर्म की ही रक्षा कर रहे हैं। क्या वर्ण व्यवस्था के आधार पर भारत का नव निर्माण संभव है। इस प्रश्न पर गांधीवादी विद्वानों को अवश्य विचार करना चाहिए। क्या कोई शूद्र जिसने एमबीबीएस, एम.डी. की पढ़ाई कर ली है उसे अपने वर्ण धर्म का पालन करना चाहिए या अपनी शैक्षणिक योग्यता के अनुसार चिकित्सक का पेशा चुनना चाहिए। गांधी का स्पष्ट मत है कि उसे शूद्र वर्ण के लिए निर्धारित सेवा का कार्य ही करना चाहिए।[20]

राजनीतिक और सामाजिक विचारों की तरह ही गांधी का आर्थिक विचार तो और विचित्र और विरोधाभासी हैं। डाॅ. आंबेडकर ट्रस्टीशिप के सिद्धांत पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि 'ट्रस्टीशिप सबसे ज्यादा हास्यास्पद है, जिसे गांधीवाद सभी विकारों का दूर करने का रामबाण नुस्खे के तौर पर पेश करता है और जिसके द्वारा धनी वर्गों के लोग अपनी संपत्ति को गरीबों के न्यास की संपत्ति मानेंगे और स्वयं को उसका मालिक की बजाय न्यासी मानेंगे। इस विषय में यही कहा जा सकता है कि यदि किसी अन्य ने इस सिद्धांत का प्रतिपादन किया होता तो लेखक उसे मूर्ख अज्ञानी समझ कर हंस देता कि उस सिद्धांतकार को जीवन की कठोर वास्तविकता का कुछ अता-पता नहीं है और दास वर्गों को यह कहकर धोखा दे रहा है कि नैतिकता एवं सदाचार के उपदेश मात्र से संपत्ति के मालिक, जो अपनी असीम तृष्णा की तृप्ति के लिए सदा से मेहनतकशों की दुनिया को आंसुओं की सौगात देते हैं.[22]
उपदेश द्वारा स्वेच्छा से वर्गीय व्यवस्था से मिली हुई अपनी बेहिसाब ताकत का दास-वर्गों पर इस्तेमाल की लालसा छोड़ देंगे और परोपकारी और त्यागी बन जाएंगे।' वास्तव में मजदूरों का शोषण और पूंजी से अधिक से अधिक मुनाफा कमाना पूंजीवाद का मौलिक सिद्धांत है। पूंजीपति चाहकर भी उदार और परोपकारी नहीं बन सकते हैं, यह उनके वश में नहीं है। पूंजीवादी समाज में पूंजीपतियों में प्रतियोगिता होती ही है और इस प्रतियोगिता में बने रहना है तो मजदूरों का शोषण करना ही पड़ेगा। मजदूरों का शोषण केवल एक शर्त पर नहीं हो सकता है जब राज्य अर्थव्यवस्था पर अपना नियंत्रण स्थापित कर ले, तो फिर पूंजीपति नहीं रह जाएंगे। इसलिए गांधी का ट्रस्टीशिप का सिद्धांत पूर्णतः धोखा है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि दुनिया के किसी भी देश की अर्थव्यवस्था में कोई भी पूंजीपति अपने आप को ट्रस्टी नहीं मानता है। अब प्रश्न उठता है कि गांधी ने इस तरह के भ्रामक सिद्धांत क्यों गढ़ा। डा. आंबेडकर उत्तर देते हैं कि 'गांधीवाद का प्रथम खास लक्षण है कि इसका दर्शन संपन्न लोगों की इस मामले में सहायता करता है कि जो कुछ उनके पास है वह उनके पास बना रहे और जो वंचित लोग हैं, जो कुछ पाना उनका हक है, उन्हें वह हक हासिल करने से रोका जाए।[21,27]

संदर्भ

1. बोंदुरंत्त, जुआअन वी. हिंसा की जीत: गाँधीवादी दर्शन का संघर्ष. प्रिन्सटन यूपी, १९९८ आईएसबीऍन ०-६९१-०२२८१-X
2. चेर्नस, ईरा. अमरीकी अहिंसा: विचारों का इतिहास, सातवाँ अध्याय .आईएसबीऍन १-५७०७५-५४७-७
3. चड्ढा, योगेश .गाँधी: एक जीवन .आईएसबीऍन ०-४७१-३५०६२-१
4. डेलटन, डेनिस (ईडी) .महात्मा गाँधी: चुनिन्दा राजनैतिक लेख .इंडियानापोलिस/कैमब्रिज : हैकट प्रकशन कंपनी (Hackett Publishing Company), १९९६ आईएसबीऍन ०-८७२२०-३३०-१
5. गाँधी, महात्मा .महात्मा गाँधी के संचित लेख .नई दिल्ली: प्रकाशन विभाग, सुचना एवम प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, १९९४.
6. इश्वरण, एकनाथ (Eswaran, Eknath).गाँधी एक मनुष्य .आईएसबीऍन ०-९१५१३२-९६-६
7. फिशर, लुईस .द एसेनसियल गांधी : उनके जीवन, कार्यों और विचारों का संग्रह . प्राचीन: न्यूयार्क, २००२. (पुनर्मुद्रित संस्करण), आईएसबीऍन १-४०००-३०५०-१
8. गाँधी, एम.के. गाँधी के पाठक: उनके जीवन और लेखन का एक स्रोत पुस्तक.होमर जैक (ईडी) ग्रोव प्रेस, न्यू योर्क, १९५६
9. गाँधी, राजमोहन .पटेल: एक जीवन .नवजीवन प्रकाशन घर, १९९० आईएसबीऍन ८१-७२२९-१३८-८
10. हंट, जेम्स डी. लन्दन में गाँधी . नई दिल्ली: प्रोमिला एवं कंपनी, प्रकाशक, १९७८
11. मान्न, बर्नहार्ड, महात्मा गाँधी और पाउलो फरेरी के शैक्षणिक अवधारणाएं. क्लौबें, बी, में .(ईडी) राजनैतिक समाजीकरण एव शिक्षा में अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन बीडी. ८.हैम्बर्ग १९९६.आईएसबीऍन ३-९२६९५२-९७-०
12. रूहे, पीटर. गाँधी: एक छायाचित्र जीवनी .आईएसबीऍन ०-७१४८-९२७९-३
13. शार्प, जीन. गाँधी एक राजनैतिक नीतिज्ञ के रूप में, अपने मूल्यों और राजनैतिक निबंधो के साथ. बोस्टन: एक्सटेंडिंग होराइज़ोन पुस्तकें, १९७९.
14. सोफ्री, गियान्नी. गाँधी और भारत: केन्द्र में एक सदी (१९९५) आईएसबीएन १-९००६२४-१२-५
15. गौरडन, हैम.आध्यात्मिक साम्राज्यवाद से अस्वीकृति: गाँधी को बूबर के पत्रों की झलकी .'सार्वभौमिक अध्ययन की पत्रिका, २२ जून १९९९.
16. गाँधी, एम.के "दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह"
17. गाँधी नामक प्रतिमा और अन्य कविताएँ[143] (डॉ. ना. मोगसाले, राजमंगल प्रकाशन, 2008)
18. "BR Ambedkar's anniversary: His quotes on gender, politics and untouchability". 6 दिस 2009. मूल से 23 जून 2009 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008. |date= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद)

ISSN: 2319 – 8753

International Journal of Innovative Research in Science, Engineering and Technology
Vol. 1, Issue 2, December 2012

19. ↑ "Rescuing Ambedkar from pure Dalitism: He would've been India's best Prime Minister". Firstpost. मूल से 25 अप्रैल 2008 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008.
20. ↑ "Do we really respect Dr Ambedkar or is it mere lip service?". DNA India. 6 दिस° 2011. मूल से 17 अगस्त 2009 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008. |date= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद)
21. ↑ "Ambedkar in Modi's quiver, says Gandhis insulted father of Indian Constitution". Deccan Chronicle. 15 अप्रैल 2011. मूल से 16 जून 2009 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008.
22. ↑ "Home for Ambedkar 'house' - Maharashtra to buy UK bungalow where Dalit icon lived". www.telegraphindia.com. मूल से 5 नवंबर 2009 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008.
23. ↑ Desk, FPJ Web (11 अप्रैल 2010). "Milestones achieved by Dr. Babasaheb Ambedkar". मूल से 6 अक्तूबर 2009 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008.
24. ↑ इस तक ऊपर जायें:अ आ "Archives released by LSE reveal BR Ambedkar's time as a scholar". https://www.hindustantimes.com/. 9 फ़र° 2010. मूल से 23 जून 2009 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008. |date= में तिथि प्राचल का मान जाँचें (मदद); |website= में बाहरी कड़ी (मदद)
25. ↑ "Zee जानकारी : किसने रची थी डॉ° आम्बेडकर के बारे में भ्रम फैलाने की साजिश". Zee News Hindi. 15 अप्रैल 2010. मूल से 8 जनवरी 2008 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 25 अप्रैल 2008.
26. ↑ http://ccis.nic.in/WriteReadData/CircularPortal/D2/D02est/12_6_2010_JCA-2-19032010.pdf Archived 2010-04-05 at the Wayback Machine Ambedkar Jayanti from ccis.nic.in on 19th March 2010
27. ↑ Ghildiyal, Subodh (29 मई 2009). "Bhimrao Ambedkar cult spreading across world". मूल से 20 जुलाई 2008 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 20 जुलाई 2008 – वाया The Economic Times.